Q → स्वधर्म की अवधारणा का विवरण दें ?

Ans → गीता का स्वधर्म का सिद्धान्त वर्ण व्यवस्था का सिद्धान्त है। इसका आधार शक्ति पृथक्करण का आदर्श है। गीता का स्वधर्म वर्णधर्म है। गीता चार वर्णों की सामाजिक व्यवस्था की समर्थक है एवं प्रत्येक व्यक्ति को अपने वर्णगत कर्म को सम्पादित करने का आग्रह करती है। स्वधर्म से आशय है - अपना-अपना कर्तव्य। गीता में सामाजिक कर्तव्यों को मुख्यतः ऐसे कर्तव्यों को, जो समाज में एकता लाने के लिए तथा एकता को बनाए रखने के लिए साधन स्वरूप है, स्वधर्म कहा जाता है।

गीता का स्वधर्म का सिद्धान्त समाज की धार्मिक एवं सामाजिक व्यवस्था से सम्बन्धित है। इसका आध्यात्मिक आधार है। गीता में धर्म एक जीवन पद्धति है। भारतीय विचारधारा में धर्म के दो स्वरूपों को स्वीकारा गया है — सामान्य एवं विशेष। सामान्य धर्म मानव धर्म है, जिससे मानव मात्र के सामान्य आचरण सम्बन्धी सिद्धांत आते है। विशेष धर्म सामाजिक व्यवस्था से

Teacher's Signature

सम्बन्धित है जिसके अन्तर्गत वर्णधर्म, आश्रमधर्म, कुलधर्म, युगधर्म, राजधर्म आदि आते हैं। इस प्रकार गीता में स्वीकृत स्वधर्म विशिष्ट धर्म है। इसमें मानवीय आचरण को नियमित करने का प्रयास किया गया है।

गीता में चारों वर्णों के स्वरूप एवं कर्तव्यों का स्पष्ट विवेचन है। गीता के अनुसार जिस व्यक्ति के स्वभाव में सत् गुण की अधिकता है, वह ब्राह्मण, जिसमें रज गुण है, वह क्षत्रिय एवं जिस व्यक्ति में तमोमिश्रित रजगुण है, वह वैश्य है तथा जिसमें रजोमिश्रित तमोगुण है, वह शूद्र है। गीता में ब्राह्मणों में सत्गुण की अधिकता के कारण उन्हें नीति-निर्धारण, क्षत्रियों में रजोगुण की अधिकता के कारण प्रशासन तथा वैश्यों को कृषि एवं वाणिज्य तथा शूद्रों को दास्यकर्म प्रदान किया है।

इस प्रकार वर्णानुकूल कर्तव्य-पालन गीता का स्वधर्म है। गीता वर्णगत कर्म को स्वधर्म की संज्ञा देकर उसे व्यक्ति का कर्म बना देती है। गीता इस बात पर बल देती है कि स्वधर्म का समभाव से पालन करने वाला

अथवा समभाव से नियत कर्म को करनेवाला व्यक्ति कभी पाप का भागी नहीं बनता तथा स्वधर्म का परित्याग करनेवाला व्यक्ति पाप का भागी बनता है। गीता के अनुसार स्वधर्म का पालन श्रेय और कर्तव्य के द्वन्द्व को भी समाप्त कर देता है।

इस प्रकार गीता द्वारा स्वधर्म के प्रतिपादन का मुख्य लक्ष्य यह था कि समाज व्यवस्था एवं सृष्टि की गति अबाध रूप से चलती रहे, लोककल्याण होता रहे तथा समाज में अधिकारों के लिए कोई संघर्ष न हो। आधुनिक युग में जबकि लोग अपने कर्तव्यों को भूल चुके हैं, गीता द्वारा अपने कर्तव्यों के पालन का आदेश और भी अधिक समीचीन हो गया है। वस्तुतः गीता में स्वधर्म के प्रत्यय का अत्यन्त पावन अर्थ है। इसने प्राचीनकाल से ही हिन्दू समाज को एकता के सूत्र में बाँध रखा है।

Teacher's Signature